पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका: विशेषज्ञों द्वारा समीक्षित वार्षिक हिंदी ई-पत्रिका
वर्ष: 2; संख्या:2; 2021; पृष्ठ संख्या: 77-79

लता

✍ बिद्या दास

"छि: माँ इससे बदबू आ रही है!"

एक काले रंग की थैली की ओर राधू के बढ़ते हाथ रुक गये। सिर घुमाकर उसने अपनी बेटी लता की ओर देखा।

कुछ जरूरी काम से मैं ब्लॉक के सर्किल ऑफिस जा रही थी। रास्ते से गुजरते समय कचड़े के ढेर के पास अचानक एक जानी-पहचानी आवाज सुनकर मैंने रिक्शे से झाँककर देखा- लता। अरे यह तो वही लता है जिसे मैंने कई बार स्कूल (आंगनबाड़ी केंद्र) के गेट से अंदर झांकते हुए देखा था। एक दिन पीछे से आकर मैंने उसे पकड़ा; बेचारी इतनी डर गई थी कि नाम पूछने पर भी नहीं बता पायी। इसके बाद भी उसे और एक-दो बार गेट के पास देखा था। रिक्शेवाले से धीरे चलाने को कहकर मैंने उनकी बात सुनने के लिए कान दिये।

"माँ, तुझे इस तरह के काम करता देख मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"क्यों री? दो महीने बंगले में रहकर क्या आयी है खुद को बड़े घर की बेटी समझने लगी है। भूल गयी क्या? मेरे इसी काम से तेरा पेट भरता है।"

माँ की बात सुनकर लता का चेहरा रुआंसा हो गया। वह कुछ नहीं बोली।

मैंने एक बार फिर झाँका। लता का चेहरा धीरे-धीरे धुंधला होता जा रहा था। उसके बारे में कुछ बातें सुन रखी थी, जो बराबर उस समय याद आ रही थीं।

हजारीबाबू की पत्नी का सातवाँ महीना शुरू होते ही ड्राइवर रमेश को एक काम करनेवाली खोजने को कहा गया। रमेश ने आकर राधू से लता को बंगले में काम करने की बात कही। राधू इस बात के

लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी। लता की उम्र मात्र ग्यारह वर्ष है और ग्यारह साल की लड़की बंगले का काम कैसे कर पायेगी यह सोचकर राधू ने मना कर दिया। पर लता के बाप से भी जब रमेश ने बंगले में काम करने वाली बात बतायी तो वह तुरंत मान गया। घर बैठे ही जब दारू के पैसे आ जाये तो फिर मना क्यों करना?

बंगले में लता के पहले के दो हफ्ते अच्छे से गुजरे। पर उसके बाद धीरे-धीरे हजारीबाबू की पत्नी का शासन और हुक्म दोनों तानाशाही में बदलने लगे। लता को न ठीक से खाने-पीने का समय मिलता था और न ही सोने या आराम करने का। मेमसाहब लता को हर वक्त अपने पास खड़ा करवाकर रखती। कभी पैरों में हल्की मालिश करने को देती, कभी बाल सुलझाने को, कभी रसोईघर से मीठा लाने को कहती, तो कभी बाहर से बनारसी पान लिवाने के लिए दौड़ाती। लता की थोड़ी देर की अनुपस्थिति भी जैसे उनके लिए असह्य थी। शारीरिक श्रम का आधिक्य होने पर भी लता को कोई शिकायत नहीं थी। अपना घर या छोटा झोंपड़ा कह लें, उस परिवेश से बिल्कुल अलग एक नया परिवेश लता को मिला था। बंगले के अंदर और बाहर के जीवन जीने के ढंग को उसने देखा, कई सारी नयी बातें भी सीखी। उसे अच्छा लगने लगा था। पर एक दिन पता नहीं क्या हुआ, लता को रसोईघर में फ्रिज का दरवाजा खोलते देख मेमसाहब ने उसे डांट फटकार कर चोरी का इल्जाम लगाया और बंगले से निकाल दिया।

बंगले का काम छोड़कर यूँ घर पर बैठा देख लता के शराबी बाप ने उस पर हाथ भी उठाया। राधू ने भी तीन-चार दिनों तक उससे बातें नहीं की।

सुना है लता पढ़ना चाहती थी। बंगले में उसने हजारीबाबू को रोज समाचार पत्र पढ़ते देखा था, मेमसाहब को भी अंग्रेजी की किताबे पढ़ते कई बार उसने देखा था। दोपहर को जब मेमसाहब थोड़ी देर सोने के लिए जाती, तब लता उनकी अंग्रेजी किताबों को खोलकर उसमें बने चित्रों को देखती; उनके भावों को समझने की कोशिश करती थी।

घर लौट आने के बाद उसने एक दिन राधू से कहा, "माँ मैं स्कूल जाना चाहती हूँ। अंग्रेजी पढ़ना चाहती हूँ।"

इस पर राधू ने कड़ा जवाब देते हुए कहा, "पेटभर खाने को मिल जाये वही बहुत है। स्कूल जाने का सपना इस जन्म में पूरा नहीं होगा।"

लता ने छोटी उम्र में ही काफी बातें सीख ली थीं। माँ के इस कड़े जवाब को सुनकर उसे अपने सपने टूट जाने का दु:ख नहीं हुआ, बल्कि माँ के

चेहरे की कठोरता के पीछे छिपे बेबसी और दु:ख ने उसके हृदय पर चोट की। लता ने कई बार माँ को बाप के हाथों मार खाते हुए देखा था- 'बच्चों की पढ़ाई' ही मारने का कारण होता था। गरीबी-जहालत, शराबी पति, रोज के झगड़े- मारपीट इन सभी ने राधू के स्वभाव को कठोर बना दिया था। लता और उससे चार साल छोटे बेटे की पढ़ाई और अच्छे भविष्य की कल्पना करना राधू ने अब छोड़ दिया। एक माँ के रूप में राधू ने अपना कर्तव्य यही मान लिया कि किसी न किसी तरीके से बच्चों का पेट भर जाये। वे जिंदा रहें।

आज लगभग डेढ़-दो महीने बाद स्कूल के किसी जरूरी काम से फिर शहर जाना हुआ। वापस लौटते समय घंटाघर के पास दाहिनी तरफ ग्यारह-बारह साल की लड़की को एक बड़े कचड़े के ढेर से कुछ बीनते हुए देखा। ध्यान देने पर मुझे वह लड़की लता जैसी लगी। शायद...वह लता ही थी।

संपर्क-सूत्र
सहायक अध्यापक
हिन्दी विभाग, कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम
मो. 9205868126
ई-मेल: hindibidya14@gmail.com

पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका